International Journal of Advanced Education and Research
ISSN: 2455-5746, Impact Factor: RJIF 5.34
www.newresearchjournal.com/education
Volume 1; Issue 4; April 2016; Page No. 33-38

नव वैष्णव आन्दोलन और शंकरदेव: एक अध्ययन

जयन्त कुमार बोरो

अस्सिटेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कोकराझार गवर्मेन्ट कॉलेज, कोकराझार, असम।

सारांश

पन्द्रहवीं (15 वीं) शताब्दी के अन्त से पहले महापुरुष शंकरदेव जी ने असम में 'नव वैष्णव धर्म' एवं भक्ति का प्रचार करना प्रारम्भ किया। शंकरदेव को असम में 'नव वैष्णव धर्म' के प्रतिष्ठापक माने जाते हैं। 'नव वैष्णव धर्म' बाह्मण्यवाद के विरोध में प्रतिक्रिया स्वरुप एक भक्ति आन्दोलन है, जिसे शंकरदेव जी ने तत्कालीन समय के समाज में व्याप्त विसंगतियों के विरोध में जागरण एवं धार्मिक दृष्टिकोण से प्रचार किया था। शंकरदेव कालीन समय की राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक वातावरण काफी असंतोष पूर्ण रहा है। समाज विखण्डित तथा बाह्मणों का वर्सस्व अधिक था। शंकरदेव ने 'बाह्मण्यवाद' के कठोर नियमों के विपरित एक सरल भक्ति मार्ग को चुना। जिसे जनसाधारण सरलता पूर्वक अपना सके। उनके द्वारा चलाये गये इस व्यापक धार्मिक आन्दोलन को ही 'नव वैष्णव धर्म' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। यह धर्म पूर्ववर्ती वैष्णव धर्म से प्रभावित तो था परन्तु शंकरदेव जी ने इसमें कुछ संस्कार कर आम लोगो के सम्मुख प्रस्तुत कर तथा वैष्णव भक्ति का द्वार सभी के लिए खोल दिये। उनके द्वारा चलाये गये भक्ति मार्ग में सभी प्रकार के धर्म एवं सम्प्रदायों का समावेश था। कबीर के निर्गुण भक्ति मार्ग में जिस प्रकार सभी लोगो का समान अधिकार था, ठीक वैसे ही शंकरदेव के द्वारा चलाये गये 'नव वैष्णव धर्म' भक्ति मार्ग में सभी प्रकार के जाति एवं समुदायों का एक समान अधिकार था। बाह्मण्य् धर्म की अपेक्षाकृत नव वैष्णव धर्म ने साधारण लोगों को अधिक प्रभावित किया। उन्होंने वैष्णव भक्ति को किसी एक वर्ग विशेष के चंगुल से निकालकर जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया था। यह भक्ति मार्ग भक्ति के क्षेत्र में 'एकेश्वरवाद' की और 'गुरु की महत्ता' को स्थापित करता है। 'नव वैष्णव धर्म' की प्रधान विशेषता है- 'एकेश्वरवाद' की स्थापना करना। इस भक्तिमार्ग को 'एक शरणनाम धर्म' अथवा 'ईश्वर के प्रति परम् आत्म-समर्पण करना का पक्षधर धर्म' भी कहाँ जाता है।

मूल शब्द: नव वैष्णव धर्म, बाह्मण्यवाद, निर्गुण भक्ति आदि।

प्रस्तावना

भारतीय भक्ति आन्दोलन के दौरान भारत की सामाजिक व्यवस्था उथल-पुथल की स्थिति में थी। राजा का शासन प्रजा के लिए कष्ट कर था। राजनैतिक दृष्टिकोण से राजा और सामन्त दोनों मिलकर समाज का शोषण किया करते थे वहीं दूसरी और धार्मिक दृष्टिकोण से देखे तो धर्म के नाम पर समाज में अंधविश्वास, वर्गवाद, जातिभेद सभी प्रकार के असहिष्णुता का वातावरण विद्यमान था। भक्ति आन्दोलन ने जिस प्रकार समाज में क्रान्ति लाने का प्रयास किया था उसका प्रभाव आज भी हमारे समाज में दिखता है। भारतीय भक्ति आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में कबीरदास और शंकरदेव का निर्गुण भक्ति मार्ग समाज में व्याप्त वर्ग भेद की खाई को मिटाने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। कबीर और शकरदेव ने अपने सहज एवं सरल भक्ति मार्ग को अपनाकर समाज में एकता एवं भाईचारे की भावना को स्थापित करने का अथक प्रयास किया। यहीं उनके जीवन दर्शन का पर्याय है।

उद्देश्य

शंकरदेव ने अपने जीवन काल में सहिष्णुता को विशेष रुप से महत्व दिया है इसीलिए उनकी महानता का, मानवता का परिचायक बन चुका है। शंकरदेव ने भक्ति के प्रचार में अपने जीवन को उत्सर्ग कर दिया। भारत का पूर्वोत्तर प्रांत विविध भाषा-भाषी एवं विविध जाति- जनजातियों से मिश्रित समुदाय से निर्मित है। सभी समुदायों की अपनी विशेषतायें है, लेकिन खान-पान से लेकरके रहन-सहन, धर्म-विश्वास, आचार-व्यवहार, रीति-नीति आदि में काफी असमानतायें भी विद्यमान हैं। इतनी विविधताओं के बावजूद शंकरदेव ने अपनी प्रतिभा के बल पर असम के विविध समुदायों में आपसी भेद-भाव को मिटा कर 'नव वैष्णव भक्ति मार्ग' के द्वारा सहिष्णुता के वातावरण को बनाये रखने का प्रयास किया। भक्ति आन्दोलन जिसने समस्त भारत के प्रांतो को छुआ और सभी प्रांतो ने अपने अनुरुप उसे ढालने का प्रयास किया। वर्तमान समाज व्यवस्था में भक्ति आन्दोलन के दौरान उत्पन्न विचारों का काफी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय भक्ति आन्दोलन का स्वरुप अखिल भारतीय रहा हैं।

शोध विधि

प्रस्तुत लेख की विषय वस्तु के अध्ययन के लिए विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया गया है तथा यह विषय समीक्षात्मकता के साथ तुलनातमक पद्धति की भी मांग रखता है। तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से भी शंकरदेव के महत्व को स्थापित किया जा सकता है।

शोध सामाग्री

प्रस्तुत आलेख की शोध सामाग्री विविध प्रकार के लेखों और साहित्य के सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त किया गया गया है। असमीया साहित्य के विविध ग्रन्थों में से आलेख को पुरा करने के लिए काफी मद्द मिली है। शंकरदेव के द्वारा लिखित 'बरगीत' और 'कीर्तन घोषा' को प्रमुख रुप से अध्ययन के लिए चयन किया गया है। हिन्दी साहित्य के विविध ग्रंथों में से भी आलेख को पूर्णता तक पहुँचाने के लिए आवश्यक सहायता ली गई है।

शंकरदेव का साहित्यिक परिचय

असमीया साहित्य में शंकरदेव को विशिष्ट वैष्णव कवि, गीतकार, नाटककार संगीतकार के रुप में परिगणित किया जाता है। उनकी कुछ प्रमाणिक रचनायें है जैसेः

1. **काव्य-** (1) हरिचन्द्र उपाख्यान, (2) रुकमिणी हरण, (3) बलिचलन, (4) अमृत मथन, (5) अजामिल उपाख्यान और (6) कुरुक्षेत्र। इन सबकी भाषा असमीया है। शंकरदेव की रचनाओं में हमे भाषा की बहुलता देखने को मिलता है।
2. **भक्तितत्व पर आधारित ग्रन्थ-** (1) भक्तिप्रदीप, (2) भक्ति रत्नाकर, (यह एक भक्ति सिद्धान्त विषयक ग्रन्थ है, इसकी भाषा संस्कृत है), (3) निमि-नवसिद्ध सम्वाद, (4) अनादिपतन।
3. **अनुदित ग्रन्थ-** (1) भागवत, (2) उत्तरकांड रामायण।
4. **अंकिया नाटक-** (1) पत्नी प्रसाद, (2) कालिदमन, (3) केलि गोपाल, (4) रुकमिणी हरण, (5) पारिजात हरण, और (6) राम विज। इन सब की भाषा

ब्रजाबुली है। आलोचक ब्रजाबुली को एक प्रकार की कृत्रिम भाषा कहते है। ब्रजाबुली में हमें संस्कृत, ब्रज, प्रचीन असमीया, हिन्दी, उड़ियाँ, बंगला आदि भाषा का रुप देखने को मिलता है।

5. **गीत-** (1) बरगीत, (शंकरदेव द्वारा रचित भक्ति परक गीत संकलन। इसमें कुल 36 पद है), (2) भटिमा, 3. टोटय और चपय।
6. **नाम प्रसंग-** (1) कीर्तन-घोषा, (2) गुणमाला।

उपर्युक्त ग्रंथों के माध्यम ये उन्होंने तत्कालीन असमीया समाज में जन जागृति फैलाने का प्रयास किया था।

भारतीय भक्ति आन्दोलन और शंकरदेव का अवदान

आन्दोलन से अभिप्राय है जन जागरण, सामाजिक मूल्यबोध में परिवर्तन संधान कर समाज को प्रगति के पथ पर ले जाना। शंकरदेव के समय में समग्र भारतवर्ष में वैष्णव आन्दोलन प्रारम्भ होने लगा। वैष्णव आन्दोलन को ही भक्ति आन्दोलन कहाँ जाता है, क्योंकि भक्ति तत्व का पूर्ण रुप से प्रस्फुटित वैष्णव धर्म के अन्तर्गत विषेश रुप से श्रीमत भागवत् और पूराण आदि ग्रंथों को केन्द्र कर विकसित हुआ। भक्तिमार्ग का मूल उद्देश्य या आदर्श भक्ति के माध्यम से ईश्वर की प्राप्ति और मोक्ष (मुक्ति) प्राप्त करना है।

भक्ति आन्दोलन की लहर ने पूरे भारतवर्ष को स्पर्श किया और इससे कोई भी अछुता नहीं रहा। असम में भक्ति आन्दोलन 'नव वैष्णव धर्म' के नाम से चला। यह आन्दोलन असम में एक समाजिक बदलाव के रुप में एक क्रांति का पहल थी। इससे असम में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। यह आन्दोलन नव वैष्णव धर्म के रुप में बाह्मण्य् धर्म के विरोध में खड़ा हुआ। इस आन्दोलन के पर्वतक होने का श्रेय महापुरुष शंकरदेव को जाता है।

भारतीय भक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ दक्षिण या दाविड़ प्रदेश से होते हुये उत्तर, पश्चिम और शेष में पूर्वी-भारत होते हुये समस्त भारतवर्ष में विस्तृत हो गया। और तत्कालीन भारतीय जन-जीवन में एक नवीन युग के आगमण की सूचना देने लगा। भक्ति आन्दोलन अथवा वैष्णव धर्म के जड़ में तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थियों की क्रिया-प्रतिक्रिया के कई कारण निहित हैं। भारतीय भक्ति आन्दोलन धर्म-अध्यात्म की नवीन व्याख्या और हिन्दु समाज की एकनिष्ठाता को संयोजित करता है। वह मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन भारतीय पुर्नजागरण का परिणाम है। आलोच्य कवि इस धारा की ईकाई है। महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव भारतीय मध्यकालीन भक्ति-आन्दोलन की महान विभूतियों में से एक है। उनकी विचारधाराओं न केवल तत्कालीन असमीया समाज में नयी चेतना का विस्तार किया, अपितु जिस विचार-धारा को उन्होंने प्रकाशित किया वह किसी न किसी रुप में आज भी लोगो के मध्य विद्यमान एवं आलोकित कर रहा है। भारतीय भक्ति आन्दोलन की पृष्ठभूमि को यदि देखा जाए तो इसकी शुरुवात दक्षिण प्रांत से प्रारम्भ माना जाता है। दक्षिण के आलावारों ने वैष्णव भक्ति को विकसित किया और तत्पश्चात् उत्तर प्रांत से होते हुये समस्त भारत में फैल गया। शंकदेव के पूर्व असम प्रांत में साहित्य-संस्कृति, कला आदि सभी दिशाओं में उन्नत के साथ वैष्णव धर्म का प्रभाव भी प्राचीन काल से ही प्रचलित था। निश्चित रुप से नहीं कहने पर भी लगभग, चौथी, पाचवीं शताब्दी से ही यह प्रचलित रहा हैं।

असम तथा भारतवर्ष में 16 वीं शताब्दी तक प्रवाहित वैष्णव भक्ति आन्दोलन ने भारतीय जनताओं को विभिन्न प्रकार से उपकार किया हैं। भक्ति धारा के प्रचार में साधु-संतो, कवि, साहित्यकारों ने अपने-अपने प्रान्तीय भाषाओं को साहित्यकर्म तथा धर्म प्रचार का माध्यम बना लिया था। जिसके फलस्वरुप प्रादेशिक भाषा की उन्नति के साथ-साथ साहित्य, संस्कृति का भी विकास होने लगा था। भारतीय शास्त्रों की बातों को आंचलिक भाषा में लिखने के कारण, साधारण लोग भी सहजता से समझने लगे थे तथा उन गन्थों में निहित धर्म, दर्शन की उपलब्धि ने मनुष्य के मन में नैतिक एवं आध्यात्मिक भाव जगाने में समृद्ध हुआ था। शंकरदेव के ग्रन्थ कीर्तन-घोषा और दशम, माधवदेव के ग्रन्थ नाम-घोषा, श्रीधर कन्दलि का कानखोवार आदि ग्रंथों का आदर आज भी असम वासियों के मध्य विद्यमान हैं। शंकरदेव, माधवदेव, दामोदरदेव के रचित गीत-पद, नाटक, आख्यान आदि तथा रामायण महाभारत जैसे प्राचीन ग्रन्थों को अनुवाद या आधार ग्रन्थों के रुप में ग्रहण कर अनेक ग्रन्थों का प्रणयन कर जनताओं के भेत स्वरुप प्रदान किया। भक्ति आन्दोलन ने भगवान के प्रति भक्ति के द्वार सभी के लिए खोल दिये हैं। वैष्णव भक्ति आन्दोलन का आदर्श समग्र भारत को एक सूत्र में पिरोकर एक जाति के रुप में सुगठित करने का प्रयास किया गया था। इस आन्दोलन के फलस्वरुप असमीया वैष्णव साहित्य ने नवीन प्राण संधान कर सर्व भारतीय चेतना के एकता का भाव समन्वय स्थापित किया। शंकरदेव ने सर्व भारतीय आन्दोलन को असम में प्रचारित कर और सर्व भारतीय पृष्ठभूमि के वैष्णव साहित्य को अपने साहित्य कर्म के आधार ग्रंथ के स्वरुप में ग्रहण किया।

मध्यकालीन सर्वभारतीय भक्ति आन्दोलन ने हिन्दु और इस्लाम धर्म के मध्य विग्यमान विरोध भाव को दूरकर शांति स्थापित करने का काफी प्रयास किया। इसमे कोई सन्देह नहीं है कि वर्तमान समय में भी भारतीय जाति के सामाजिक संगठन के निर्माण के पथ प्रसंग में भक्ति आन्दोलन के उद्देश्य और आदर्श की प्रासंगिकता को नज़रांदाज नहीं किया जा सकता।

शंकरदेव ने ही मध्ययुग में असम के निवासियों को नयी चेतना प्रदान करने का प्रयास किया था। कामरुप से कन्याकुमारी तक भ्रमण करे असम को भाषिक, सास्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से शेष भारत के साथ जोड़ने के श्रेय शंकरदेव को ही है। उनके उद्भव के समय असम में विविध प्रकार की उपभाषा, नाना धर्म, नाना प्रकार के आचार-विचार एवं पद्धतियाँ विद्यामान थी। नैतिक आदर्श, आध्यात्मिकता, साधना और सत्यधर्ण के आचरण के अभाव ने तत्कालीन समाज व्यवस्था को विश्रृंखलित किये रखा था। जन साधारण के सम्मुख एक नैतिक आदर्श का अभाव होने के कारण अपनी रुचिनुसार पथ का अनुसरण करते थे। इसके अलावा भी तत्कालीन समाय में वामाचारी तान्त्रिकों का प्रभाव कुछ-कुछ स्थानों में विशेष रुप से था। जैसे असम के खदिया (जिला तिनसुकिया) के ताम्रेश्वरी मंदिर, कामरुप में कामाख्या मंदिर आदि स्थान तान्त्रिको का केन्द्र था। तान्त्रिको के विविध मत, विविध देव-देवियों की उपासना और मान्यताओं ने आम लोगो का मन समातन धर्म के प्रति उदासिन होने लगा था। आम जनसाधारण का मन सनातन के प्रति आस्थाहीन हो चुका था। इसके भी कई कारण थे। इस प्रकार के विकट परिस्थितियों में महापुरुष शंकरदेव ने जनता के सम्मुख प्राचीन सनातन धर्म का आदर्श नवीन स्वरुप में प्रस्तुत किया। असम के विविध प्रकार के धर्मावलम्बी एवं मतावलम्बी वालों में प्रेम, एकता का अभाव था। आध्यात्मिकता के भाव को जगाने के लिए एक सहज आचरण वाले धार्मिक पथ की आवश्यकता थी। उन्होंने इसके लिए वैष्णव भक्ति को नव वैष्णव धर्म को एक नये रुप में प्रचार किया और प्राचीन वैष्णव धर्म को संसारिक रुप दिया।

उनका दृढ़ विश्वास था कि नव वैष्णव भक्ति मार्ग ही आम लोगों के हृदय में सहज रुप से बास कर सकता है। इस उद्देश्य हेतु उन्होंने अपने जीवन के बहुमूल्य बारह वर्ष सम्पूर्ण भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न तीर्थ स्थलों का भ्रमण कर एवं विभिन्न मठ-मन्दिरों का दर्शन किये। विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायों के क्रियाकलापों को आत्मसात् कर अपने स्वदेश लौट आते है तथा देशकाल और पात्र के अनुरुप एंकान्तिक वैष्णव भक्ति का मार्ग का प्रवर्तन करते है। नाम स्मरण, देवता (उपास्य), गुरु (मार्गदर्शक), और भक्त (सत्संग) – इन चार तत्व को भक्ति मार्ग के पथ के लिए आवश्यक माना। इन तत्वों को मिलाकर शंकरदेव ने एकशरण नाम धर्म के रुप में वैष्णव भक्ति को चहु दिसि प्रचार कर आम लोगों के मध्य सरल भक्ति भाव का अलख जगाने का प्रयास किया। एक शरण नाम धर्म ही शंकरदेव के भक्ति मार्ग का सिद्धान्त है।

नव वैष्णव धर्म और शंकरदेव का आध्यात्मिक दान

असमीया सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन के प्रति शंकरदेव का जो अवदान रहा है उस पर विचार करने के लिए निश्चिय ही इनके द्वारा रचित ग्रन्थों का अवलोकन करना आवश्यक हैं। महापुरुष शंकरदेव ने असमीया समाज को अवदान के रुप में बहुदेव वाद के स्थान पर एक प्रधान देवता का संधान करवाया, दान के द्वारा अनन्त सत्यों के मध्य सनातन सत्य की उपल्बधि के प्रति सामाजिक चेतना के जागरण को प्रचारित किया। कर्म एवं धर्म के विभिषिका का निवारण, बाह्य अनुष्ठान

या आडम्बर के स्थान पर आन्तरिक आध्यात्मिक अनुभूति को ही प्रधान लीला स्थल के रुप में प्रतिपादन करना, तथा सामाजिक श्रेणी विभाजन के व्यवधान के प्रति सामाजिक चेतना आदि शंकरदेव का अतुलनीय अवदानों में से एक हैं। उपर्युक्त सभी अवदानो को उनके द्वारा रचित ग्रन्थों में भली भाँति देख सकते हैं । शंकरदेव ने आध्यत्मिकता के श्रेत्र में संसार की क्षणभंगुरता की ओर भी इशारा किया है। संसार में मनुष्यों को विविध प्रकार के लोभ, मोह-माया आदि के कारण जीवन को अंधकार में रखना पड़ता है। जीवन में ईश्वर की प्राप्ति के लिए मोह को त्याग करना पड़ता है क्योंकि यह जीवन नश्वर और कमल के पत्ते के जल के समान है। वैष्णव धर्म के प्रचार के उद्देश्य से बरगीत का प्रणयन किया गया था । इसके माध्यम से निर्गुण निराकार परम ब्रह्म को साकार रुप में विविध नाम देकर श्रीकृष्ण, राम, नारायण और गोपाल आदि को एकमात्र उपास्य देवता मानकर उन्हीं का गुण-गान किया है । शंकरदेव के बरगीत में कृष्ण को रासलीला करने वाले प्रेमी के रुप में नहीं, अपितु उनको परमात्मा का स्वरुप मानकर वर्णन एवं चित्रण किया हैं। बरगीत में श्रीकृष्ण को परित्राण कर्ता और पापविनाशक रुप में वर्णन किया गया है। शंकरदेव के बरगीतों की चर्चा की सुविधा के लिए इसे चार भागों में विभक्त कर सकते हैं। जैसे- बरगीत में बाल गोपाल का वर्णन, बरगीत में गोपी उद्धव सम्वाद वर्णन, बरगीत में सच्चिदानंद भगवान नारायण का वर्णन, बरगीत में अभिव्यक्त आध्यात्मिक और दार्शनिक आदर्श, भक्ति का निरुपण, संसार की क्षणभंगुरता, नाम की महत्ता आदि। बरगीत को हम आध्यात्मिकता की कसौटी पर उतार कर देख सकते है। कृष्ण के बाल वर्णन के अन्तर्गत वृन्दावन के कालिन्दी नदी के किनारे गौ चराना, वासुरी बजाना, और नाना प्रकार के नृत्य कर आनन्द की अनुभुति करना आदि का चित्रण किया गया है। जैसे-

ध्रुव- आनन्दे गोविन्दे वाय वृन्दावन वेणु ।
रुपे भुवन भुले रहिया कदम्ब मूले
कालिन्दी तीरे राखे धेनु ।। [1] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् गोविन्द वृन्दावन में आनन्द मन से वेनु बजा रहे है। वे कदम्ब के वृक्ष पर बैठ कर यमुना नदी के किनारे गौ चढ़ा रहे हैं, उनके इस रुप को देख कर जगत के समस्त प्राणी मोहित हो गये हैं।
कविवर कृष्ण के रुपों का वर्णन करते हुये आगे कहते है कि-

ध्रुवः बालक गोपाल करतरे केलि ।
उच्चाया पाञ्चयनि नाचे हासे गोप मेलि ।। [2] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् कवि शंकर कहते है कि बालक गोपाल क्रीड़ा कर रहे है। और वे पाञ्चयनि उठा-उठा कर अन्य गोपालों के साथ हँस-हँस कर नृत्य कर रहे हैं।
बरगीत में बाल गोपाल का रुप चित्रण अति मनमोहक बन पड़ा है। उनका रुप सबको भा जाता है। एक सखी दुसरी सखी से कहती है कि-

ध्रुव- देखु सखी मधुर मूरुति हरि ।
धरि अधरे पूरे मूरति ।।
पद - तनु अभिनव घनकाला ।
उरे लुले कदम्बकु माला ।
पीत अम्बर तड़ित ज्योति ।
जले कम्बुगले गजमोति ।।
मनि कौस्तुभ कण्ठत लुले ।
चारि शिरे शिखण्डक डोले ।।
नील अलक लोले कपाले ।
कर्णत मरक कुण्डल डोले ।।
भुज कंकन रण्जे केयुरे ।
कटिक कनक किंकणि झुरे ।।
पदपंकज मन्जरी रोले ।
कृष्णकिंकर शंकर बोले ।। [3] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि हे सखी, हरि के मधुर मूर्ति को देखिये। अधरो पर मुरली धारण कर बजाने लगे है। उनका शरीर बादलो (मेघों) की भाँति श्यामवर्ण का है और वक्षस्थव पर कदम्ब की माला झूल रहे है। उनके शरीर पर पीट वस्त्र ऐसे सुशोभित है मानो बिजली की चमक हो। शंख की भाँति उनके कंठ में गजमोति की माला और कौस्तुभ मणि झूलते रहे है जो उनके सुन्दरता को भी वृद्धि कर रहे है। उनके मस्तक पर मोर पंख भी झूलते हुये बहुत सुन्दर लग रहे है। उनके मुखमंडल पर नीले अलके झूल रहे तथा कानों में मकर के कुण्डल भी झूल रहे है। हाथों में धारण किये हुये अलंकार केयूर और कंकन बहुत ही सुशोभित हो रहे हैं। कमर (कटि) में स्वर्ण की किंकणि भी लटके हुये है। कृष्ण भक्त कवि शंकरदेव कहते है कि कृष्ण के पद्युम (कमल) के समान दोनों चरणों में नुपुर भी झुनझुन ध्वनि कर बज रहे हैं।
गोपी उद्धव सम्वाद के अन्तर्गत कृष्ण का वृन्दावन तथा गोकुल छोड़कर मथुरा गमन आदि का चित्रण किया गया है। कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात् उनके परम् भक्ति गोपिनी और प्राण प्रिय गोकुलवासियों की वेदना और पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया गया है। श्री कृष्ण सब कुछ जानकर अपने परम् मित्र उद्धव को गोकुल भेजते है। गोपियाँ उद्धव से अपने प्राण प्रिय कृष्ण के बारे में पुछते है तथा श्रीकृष्ण का गुण वर्णन करते हुये गापियाँ कहती है कि जिस गोपाल को हम हमेशा हृदय से ध्यान करते है, वह कृष्ण सम्पूर्ण गोकुल वासी के लिए जीवन-धन है। उस केशव के बिना हम जीवन को कैसे धारण कर सकते है। शंकरदेव ने कृष्ण को बरगीत में परमात्मा और गोपियों का जीवात्मा का प्रतीक स्वरुप में वर्णन किया। आत्मा का परमात्मा के बिना जीवन निर्थक है। कवि शंकरदेव कहते है कि-

ध्रुवः कि कहब उद्धव, कि कहब प्राण ।
गोविन्द बिने भयो गोकुल उछान ।।
पदः शून्य भेल अंगिना बिरिन्दा बिविन ।
ना शोभे रयनी जैसे चान्दबिहिन ।।
नाहि चारब धेनु कालिन्दीक कूल ।
आर न शुनबो बेनु कदम्बक मूल ।।
मथुरा रहल सब गोपिनीक पीऊ ।
केशव बिने कैसे धरबहो जीऊ ।। [4] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् हे प्राण बान्धव उद्धव तुमसे क्या कहुँ ? गोविन्द के बिना समस्त गोकुल सुना हो गया है। जिस प्रकार रातों की शोभा चन्द्र के बिना नहीं होता, ठीक इसी प्रकार कृष्ण के बिना वृन्दावन की शोभा नहीं रही है। अब श्यामसुन्दर यमुना के किनारे गौ को चराने नहीं आएगे, अब कदम्ब वृक्ष के नीचे कभी भी बासुरी की ध्वनि सुनना को नहीं मिलेगी। समस्त गोपियों के प्रियतम कृष्ण के मथुरा में जा कर रहने लगे है। उस केशव के बिना हम अपने प्राणों को धारण कर सकेगे।
सभी गोपियाँ उद्धव से कहती है कि हम लोगो ने पति-पुत्र की अभिलाषा त्याग कर सिर्फ कृष्ण के चरणों की ही चिन्ता कर रहे है। जैसे-

ध्रुवः कह मोहे उद्धव जीऊ ।
कैसे छाड़ल गोष्ठ कृष्ण प्राणपिऊ ।।
पदः पति सुत सुहृद सबहि अभिलाषा ।
छोड़ि कयलों कृष्ण चरणकु आश ।।
तबहु रहलि मेरि बन्धु मधुपुरी ।
निकरुण कानु नावे अवहु बहुरि ।।
ब्रजकु जीवन धन नन्दक कुमार ।
बिछुड़ल पूरबक सुनेह हामार ।।
कैसे धरबो अब ब्रजबधु प्राण ।
कृष्णकिंकर रस शंकरे भाण ।। [5] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् हे उद्धव ! तुम मुझसे यह कहो कि हमारे प्राण प्रिय कृष्ण गोकुल किसलिये छोड़कर चले गये ? हम लोगो ने अपने पति, पुत्र, मित्र-बन्धु सभी की आशा को

त्याग कर केवल कृष्ण के चरणों पर ही विश्वास किया था जबकि हमारे बन्ध माधव मथुरा में जा कर रहने लगे। गोपियाँ कहती है कि निष्ठुर कानु (कृष्ण) आज तक लौट कर नहीं आये है। ब्रज वासी के जीवन रुपी धन नन्द के कुमार कृष्ण ने हमारे पूर्व के सभी स्नेह को भूला दिया है। गोपियाँ उद्धव से कहती है कि अब हम सब ब्रज की बधुये कैसे अपने प्राणों को धारण कर सकेगें ? कृष्ण के दास शंकरदेव ने गोपियों-उद्धव के कृष्ण वियोग के इस रस पूर्ण प्रसंग का मधुर वर्णन किया है।

भगवान नारायन ही इस मायामय संसार से भक्तों को मुक्ति दिला सकते है। बरगीत के इस भाग में कवि ने कहा है कि मायामय संसार के भोग विलास में लिप्त रहने पर उससे उद्धार होने का उपाय नहीं है । यदि काम, क्रोध, लोभ, माया, वासना मद, माधुर्य आदि सांसारिक रुपों से बचे रहना है तो हरिनाम का श्रवन-कीर्तन और स्मरण करते रहना होगा। इस संसार से राम नाम ही एकमात्र मुक्ति का मार्ग है।

ध्रुवः बोलहु राम नामेसे मूकुति निदाना।
भव बैतरणी-तरणी सुख सरणी
नाहि नाहि राम नाम समाना ॥ [6] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् भगवन्त राम नाम ही एकमात्र मुक्ति का कारण है इसलिये उनका नाम लेना चाहिए। बैतरनी (एक पुराण-कल्पित एक नदीं, जिसमें पापियों की आत्मा को बहुत दिनों तक दुःख भोगना पड़ता है) नदी की भाँति यह संसार भी कष्टदायक है। उससे उबड़ने का एक मात्र उपाय राम नाम ही है। बरगीत में शंकरदेव ने ईश्वर को तानों लोको में सत्य बताया है। वह माया से परे सच्चिदानंद स्परुप है। शंकरदेव कहते है कि-

जगजन-जीवन अजन-जनार्दन
दनुजदमन दुखहारी।
महादानन्दकन्द परमानन्द
नन्दनन्दन बनचारी ॥ [7] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् जय शब्द में श्रेष्ठ, प्रकाश, और व्याप्त का भाव को निहित किया है। श्री विष्णु ही एकमात्र सम्पूर्ण सृष्टि का उद्धार करता है। उसी का स्मरण मात्र से सिद्धि की प्राप्ति होती है। वहीं दीन-दुखियों का दया का आधार है और भक्तों को मुक्ति प्रदान करने वाले है। प्रभु विष्णु ही सभी प्राणियों के उद्धार कर्ता है। वहीं भक्तजनों को अभय प्रदान करता है। विष्णु ही एकमात्र गुणयुक्त नाम है। इसीलिए उसकी जय जय कार करते हुए, उसके नाम के जीवित रखना चाहिये।

कवि ने भारतीय वेदान्त दर्शन के अद्वैतवाद अर्थात् ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या को प्रकाशित किया है। परम ब्रह्म ही सगुण रुप धारण कर राम, हरि, विष्णु आदि नामों से विभुषित होकर एकमात्र भजनीय और उपास्य देवता के रुप में अवतरित हुआ है।

ध्रुवः नाहि नाहि रमया बिने पापतारक कोई।
परमानन्द-पद-मरकन्द सेवहु मन मोई ॥ [8] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् इस मायामय संसार में राम के बिना कोई ओर पापों से उद्दार कर्ता नहीं है। हे मन वहीं परमान्द सहोदर है, उसी परमान्द राम की सेवा कर उसके चरण रुपी मधु का पान कर चाहिए।

सांसारिक प्रवृत्तियाँ काम, क्रोध, लोभ, मद, वासना, माया आदि मुनष्य को पथ भ्रमित कर उलझाता रहता हैं। शंकरदेव कहते हैं कि इस संसार से उद्धार और सत्य की ओर अग्रसर होने के लिए राम या नारायण के चरणों के अलावा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। वहीं सब पापों का नाश कर मुक्ति दे सकते है।

ध्रवः नारायण चरणे करहों गोहारी।
बिषय-बिलास-पाशे छान्दि इन्द्रिय मोहि
उहि लुटै बाटौवारी ॥ [9] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् हे नारायण ! तुम्हारे चरणों पढ़कर में भक्ति भाव से प्रार्थना कर रहा हूँ। जिस प्रकार एक डाकु राहगीरों को बांध कर सब कुछ उनसे लुट लेता है ठीक इसी प्रकार मुझे भी इन्द्रियों रुपी डाकुओं ने विषय-वासना, भोग विलास की रस्सी से बान्ध कर प्ररमार्थ रुपी धन को लुट लिया है। नाक ने सुगन्ध की ओर, जीभ मधुर रस की ओर, कानों ने विविध शब्द ध्वनियों की ओर, आँखों ने सुन्दर वस्तुओं की ओर अपने ध्यान को बढ़ाया है। आँखे हमेसा सुन्दर वस्तुओं को ही देखना चाहता है। शरीर की त्वचा सुन्दर स्पर्श चाहता है। ऐसी अवस्था में प्रभु के चरणों में कब भजन करुगा? काम, क्रोध, मोह, मद, अभिमान आदि मेरे प्रबल बैरी है। ये सारे मुझे अपने बन्धन से कभी भी मुक्त नहीं होने देते। शंकरदेव ने बरगीत में भक्ति से ही ईश्वर की करुणा लाभ करने का उपाय बताया है। बरगीत में श्रवण-कीर्तन के अलावा प्रेमभक्ति, दास्यभक्ति और एकचरण भक्ति मार्ग का वर्णन किया है। 'एक नाम धर्म' ही शंकरदेव के भक्ति मार्ग का प्रमुख सिद्धान्त है । बरगीत के विषय वस्तुओं ने जिस तरह लोगो को आकर्षित और अपने महत्व को स्थापित किया है । ठीक इसी प्रकार बरगीत का साहित्यिक सौन्दर्य अपने महत्व को बनाये रखने में सफल हो सका है । कवि ने बरगीत में शब्दालांकरों और अर्थालंकारों का सुन्दर और यथोचित प्रयोग कर गीतों के सौन्दर्य में वृद्धि कराया है। इसमें हमें अनुप्रास, अत्यानुप्रास आदि अलंकारों का सुन्दर उदाहरण मिलता है। जैसे-

1. *शुन शुन रे सूर बैरी प्रमाणा, निशाचर नाश निदाना।*
राम नाम यम समरक साजि, समदले कयलि पयाना ॥ [10] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

अर्थात् कवि शंकरदेव कह रहे है कि रात में राक्षसों की गर्जना से बचाव का रास्ता है। बहरेपनपर बन्द कान पर भयंकर आवाजों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। राम का नाम लेने पर यमराज की सेना भी भाग जाती है, राम का ऐसा प्रभाव है कि इस नाम को लेने पर अमोघ अस्त्र भी टिक नहीं पाता। दुश्मन लड़ाई के मैदान से जिस तरह पराजित होकर भागता है उसी तरह दुश्मन राम के अमोघ अस्त्र के सामने से भाग जाता है।

2. *जगजन-जीवन अजन-जनार्दन दनुजदमन दुखहारी।*
महादानन्दकन्द परमानन्द नन्दनन्दन बनचारी ॥ [11] (हिन्दी लिप्यान्तरण)

निसन्देहः शंकरदेव के द्वारा रचित भक्तिपरक पदों को ही बरगीत कहा जाता है। शेकरदेव के बरगीत गीतिकाव्य का एक श्रेष्ठ उदाहरण है। नाटक-पद की अपेक्षाकृत शंकरदेव के गीतों ने ही वैष्णव आन्दोलन को प्रचार करने में अधिक सहायता किया। इसके माध्यम से उन्होंने नव वैष्णव धर्म का काफी प्रचार किया। आज भी नामघरों में बरगीत को गाया जाता है। बरगीत वैष्णव और पुरे असमीया जाति के लिए गुरुवाणी है। विविध जाति और समुदायों में बीच आज भी शंकरदेव जीवित पाये जाते है। कबीर की भाँति शंकरदेव भी एक क्रान्तिकारी भक्त कवि थे। उनकी भक्ति, बरगीत और समाज दर्शन की प्रासंगिकता आज भी है। ऐसे भक्त कवि की आवश्यकता हर काल में होती है। शंकरदेव ने संसार की नशवरता के विषय में कहाँ है कि –

ध्रुव- पावे परि हरि करोहों कातरि
प्राण राखबि मोरे।
विषय विषयधर विषे जरजर
जीवन नरहे थोर ॥ [12]

अर्थात् शंकरदेव प्रभु के चरण में गिर कर प्रार्थना करते हुये कहते है कि हे प्रभु मैं तुम्हारे चरणों में गिर कर कातर प्रार्थना करता हूँ कि मेरे प्राणों की रक्षा करना। इस संसार की समस्त विषय-वासनाओं रुपी विष ने मेरे अन्दर प्रवेश कर मेरे जीवन को जरजर कर दिया।

शंकरदेव ने भक्ति भावना के लिए मोह-माया, पुत्र, परिवार, धन, मित्र आदि सभी प्रकार के बन्धनों से मुक्त होने पर विशेष प्रकार से बल दिया है।

पद- अथिर धनजन जीनव यौवन
अथिर एहु संसार।
पुत्र परिवार सबहि असार
करोहो का हेरि सार ॥

कमल-दल-जल चित चंचल
थिर नाहे तिल एक ।
नाहि भवभय भोगे हरि हरि
परम पद परतेक ।।
कहतु शंकर ए दुःख सागर
पारा करा हृषिकेश ।
तहु गति, मति देहु श्रीपति
तत्व पंथ उपदेश ।। [13]

अर्थात् शंकरदेव ने इस पद के द्वारा संसार को क्षणभंगुर और सभी सांसारिक वस्तुओं को धन-दौलत, मनुष्य का जीवन, यौवन, घर, पुत्र, परिवार, सगें-सम्बन्धी सभी को मुल्यहीन बताया है । कवि लोगो के समक्ष उदाहरण रखते है कि जिस प्रकार कलम के फूल की पत्तियों पर पानी ठहर नहीं सकता । ठीक इसी प्रकार मनुष्य का मन भी चंचल और अस्थिर है, कहीं भी क्षण भर के लिए ठीक से नहीं रह सकता । संसार की भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति ही परमार्थ समझना लेना मुर्खता है । कवि शंकरदेव कहते है कि मनुष्यों को संसारिक दुःखों से ईश्वर ही पार करा सकता है । वे पद के अंत कहते है कि अब मेरे मन में सांसारिक वस्तुओं के प्रति न कोई इच्छा-आकांक्षा है और न ही किसी प्रकार का भय रह गया है । भोग-विलास में कोई विश्वास नहीं रहा । हे हरि ! तुम मेरे मन को ऐसी भक्ति दो कि मैं तुम्हारे उपदेश पर चलकर परम तत्व को प्राप्त कर सकुँ ।

शंकरदेव ने अपने भक्ति मार्ग के लिए विष्णु के अवतार कृष्ण को अपना अराध्य के रुप में स्वीकार किया, और भक्ति मार्ग का नाम एकशरण धर्म के रुप में घोषणा किया। जिसके सम्बन्ध में असमीया साहित्य के आलोचक डॉ. वाणीकांत काकति कहते है कि- "शंकरदेव के वैष्णव मत का प्रसिद्ध नाम है एकशरण धर्म- ईश्वर में एकांत शरण-धर्म । वह ईश्वर ही विष्णु है, नारायण के रुप युग-युग में उसका आविर्भाव होता है । विष्णु-पूजा के लिए प्रियतम अवतार है कृष्ण । " [14] शंकरदेव ने समस्त असम राज्य में अपने भक्ति मार्ग के द्वारा मानवतावाद की प्रतिष्ठा करने सफल सिद्ध हुये । शंकर के इस भक्ति मार्ग में मूर्ति पूजा को निषेध किया गया गया है । भक्ति के सरल और सहज मार्ग को माध्यम बनाया । भक्तिकाल के इस महामानव ने एक नये युग का सुत्रपात कर समस्त भारतवर्ष को आलोकित किया । "शंकरदेव ने असम को एक नया जीवन, नया साहित्य और नया राष्ट्र प्रदान किया । कितने राजा आये, कितने राजा चले गये – कालवशतः उनके राज्य धूलमय हो गये, परन्तु शंकरदेव का राष्ट्र अटूट रहा- असमिया समाज के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में उनकी क्षमता आज भी विद्यामान है ।" [15]

शंकरदेव के नव वैष्णव भक्ति मार्ग की विशेषतायें

महापुरुष शंकरदेव के द्वरा प्रवर्तित नव वैष्णव भक्तिमार्ग की कुछ प्रमुख विशेषतायें हैं-

(क) यह धर्म कृष्ण भक्ति प्रधान है ।

(ख) इस भक्तिमार्ग में भागवत्-पुराण और गीता आदि ग्रंथ को मुख्य एवं आदर्श रुप में ग्रहण किया है ।

(ग) श्रवण और कीर्तन के द्वारा भगवान की उपासना करने पर बल दिया है ।

(घ) नाना प्रकार के देव-देवियों की उपासना के स्थान पर निर्गुण भक्ति द्वारा भगवान विष्णु का आश्रय लेने पर विशेष जोड़ दिया है ।

(ङ) गुरु-शिष्य के मध्य श्रेष्ठ सम्बन्ध पर बल दिया है ।

(च) भक्ति मार्ग पर चलने के लिए अहिंसा, प्रेम, दया, ममता, त्याग आदि मानवीय गुण को महत्व बताया है ।

(छ) गुरु शंकरदेव ने भक्ति के श्रेत्र में ब्राह्मण-चण्डाल सबका एक समान अधिकार बताया है ।

(ज) योग, तप, व्रत आदि कठिन क्रियाकलापों को नव वैष्णव धर्म एवं भक्ति मार्ग में खण्डन किया गया हैं ।

शंकरदेव ने इस भक्तिमार्ग को काफी सरल बनाने का प्रयास किया है । नव वैष्णव धर्म के नीति और आदर्शों को जनसाधारण तक पहुँचाने तथा समझाने के लिए एवं श्रवण, कार्तन और स्मरण आदि की सुविधा के लिए काव्य, नाटक और गीत जैसे साहित्य का प्रणयन किया ।

उपसंहार

उपर्युक्त विश्लेशण के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय भक्ति आन्दोलन को असम जैसे सुदूर प्रांत में फैलाने का श्रेय शंकरदेव को ही जाता है । यह आन्दोलन नवीन चेतना का एक आगमण है । इस आन्दोलन के कारण भारतीय धार्मिक दृष्टिकोण में काफी परिवर्तन आया । शंकरदेव ने 'नव वैष्णव धर्म' को जन सुधार एवं क्रांति के लिए हथिर के रुप में प्रयुक्त किया । भारतीय भक्ति आन्दोलन के प्रसंग में शंकरदेव के योगदान को एक महान उपलब्धि के रुप में परिगणित किया जा सकता है। 'बरगीत' और 'कीर्तन-घोषा' महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव का भरतीय संस्कृति के लिए एक अभिनव अवदान है । हम वैष्णव भक्ति को सगुण भक्ति के रुप जानते है । परन्तु शंकरदेव एक मात्र ऐसे संत कवि हुए जिन्होंने 'वैष्णव भक्ति' को 'निर्गुण भक्ति' के रुप में प्रचार किया । आज भी असम के नामघरों में ईश्वर के किसी भी सगुण रुप का दर्शन नहीं होता हैं । उनका उद्देश्य था कि वैष्णव भक्ति को आर्योतर समुदायों में भी स्थान मिले तथा यह किसी एक जाति और वर्ण विशेष का धर्म बन कर न रहें । इसे ब्राह्मण्यवाद के घरे से निकालकर आम लोगो तक पहुँचाना था । क्योंकि पूर्वोत्तर भारत विविध भाषा-भाषीवाला प्रान्त रहा है और यह आर्यों और अनार्यों दोनों समुदायों का वासस्थल है । सामाजिकता के सम्बन्ध में कबीर और शंकरदेव आपस में मेल खाते है । शंकरदेव असम प्रान्त के भक्ति आन्दोलन के प्रवर्तक माने जाते है तथा उनका भक्ति आन्दोलन के दौरान समाज की विविध सामाजिक विसंगतियों को दूर करने का प्रयास रहा है अपने भक्ति सिद्धान्त 'एक नाम धर्म' की स्थापना कर 'नव वैष्णव भक्ति' का प्रचार करना चाहते थे । एक नाम धर्म से अभिप्राय है कि सम्पूर्ण जगत में एक ही ईश्वर है, उसी का स्मरण, जप, तप, प्रार्थना और भक्ति करनी चाहिये । उनके भक्ति मार्ग का बरगीत एक माध्यम रहा है और उसके लिए ब्रजाबुली भाषा का प्रयोग किया । यह ब्रजाबुली एक प्रकार की कृत्रिम भाषा है । जिसमें असमीया, संस्कृत, ब्रज, हिन्दी, उड़िया, बंगला आदि को मिलाकर एक भाषा तैयार किया गया। असम के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में बरगीत का विशेष महत्व है । इसमें साहित्यिकता, काव्यात्मकता और संगीतात्मकता का सुन्दर समाहार रुप देखने को मिलता है । असमीया साहित्य में बरगीत गीतिकाव्य और दास्य भक्ति का एक उत्कृष्ट उदाहरण है । शंकरदेव जी का मानवतावोध की भावना ने ही उसे महान बनाया है ।

पादटीका

1. प्रबन्ध गानर परम्परात बरगीत (शंकरदेव के बरगीत खण्ड से), सम्पादक- बापचन्द्र महन्त, प्रथम संस्करण- अगस्त 1992, प्रकाशकः स्टुडेन्ट स्टोरस, कॉलेज होस्टेल रोड, गौहाटी, पृष्ठ संख्या- 85.
2. वहीं, पृष्ठ संख्या- 86
3. वहीं, पृष्ठ संख्या - 84
4. वहीं, पृष्ठ संख्या - 93
5. वहीं, पृष्ठ संख्या - 96
6. वहीं, पृष्ठ संख्या - 71
7. वहीं, पृष्ठ संख्या - 59
8. वहीं, पृष्ठ संख्या - 72
9. वहीं, पृष्ठ संख्या - 62
10. वहीं, पृष्ठ संख्या - 98
11. वहीं, पृष्ठ संख्या – 59
12. वहीं, पृष्ठ संख्या- 69.
13. वहीं, पृष्ठ संख्या- 69.

14. मातृ के साथ विभेद, प्राचीन कामरुप की धर्म-धारा, लेखक- डॉ. वाणीकांत काकति, अनुवादक- डॉ. भूपेन्द्र रायचौधरी, संस्करण – 2009. प्रकाशक- पूर्वांचल प्रकाश, गुवाहाटी- 01, असम। पृष्ठ संख्या- 115.
15. नवीन श्रृखलाः शंकरदेव की देन, प्राचीन कामरुप की धर्म-धारा । वहीं, पृष्ठ संख्या- 121.

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वर्मन, शिवनाथ, सम्पादक, प्रथम संस्करण, जून- 1991, शंकरदेव, असमीया साहित्यर बुरंजी, प्रकाशकः आनन्दराम बरुवा भाषा-कला संसकृति संस्था, उत्तर गौहाटी – 30, असम।
2. महन्त, बापचन्द्र, द्वितीय संस्करण, अक्टूबर- 2012, प्रबन्ध गानर परम्परागत बरगीत, प्रकाशकः बनलता, नतुन बजार, डिबरुगढ़ – 01, असम।
3. महन्त, बापचन्द्र, सम्पादक, प्रथम संस्करण, अगस्त-1992, बरगीत, प्रकाशकः स्टुडेन्ट स्टोरस, कॉलेज होस्टेल रोड, गौहाटी – 01, असम।
4. शर्मा, कुसुम चन्द्र, प्रथम संस्करण, अक्टूबर- 2004, शंकरदेव साहित्यर आभाख, वैष्णव भक्तिवाद शंकरदेव आरु माधवदेवर साहित्य आलोचना, प्रकाशकः श्रीमती कामेश्वेरी देवी, हेमन्तिका, जापारकुसि, नलवारी, असम।
5. काकति, डॉ. वाणीकान्त, पंचम संस्करण, अगस्त- 2011, बरगीत शीर्षक प्रबन्ध, पुरनि असमीया साहित्य, प्रकाशकः राजेन्द्र प्रसाद मजुमदार, असम प्रकाशन परिषद, गौहाटी– 21, असम।
6. गोस्वामी, साहित्यचार्य जतीन्द्रनाथ, सम्पादक, सप्तम संस्करण-2007, श्रीश्री शंकरदेव रचित कीर्तन-घोषा और श्रीश्री माधवदेव रचित नाम-घोषा, प्रकाशक- ज्योति प्रकाशन, पानबजार, गौहाटी-01, असम।
7. नेउग, महेश्वर, लेखक, श्रीश्री शंकरदेव, अष्टम संस्करण-2006, प्रकाशक- चन्द्र प्रकाश, पानबजार, गुवाहाटी- 01, असम।
8. काकति, डॉ. वाणीकांत लेखक, रायचौधरी, डॉ. भूपेन्द्र, अनुवादक, प्राचीन कामरुप की धर्म-धारा, लेखक- डॉ. वाणीकांत काकति, अनुवादक- डॉ. भूपेन्द्र रायचौधरी, संस्करण – 2009. प्रकाशक- पूर्वांचल प्रकाश, गुवाहाटी- 01, असम।